निर्गुण कवि एवं संत : कबीर और रैदास

सुमन विश्वकर्मा*

भारत के इतिहास में उत्तर भारत के सन्तों की परम्परा आज तक चली आ रही है। इनकी रचनाओं में स्वानुभूति पर आधारित ज्ञान और गहरी भावानुभूति दिखाई देती है। भक्ति काव्य के समन्वय की दृष्टि से सोलहवीं शताब्दी अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है। भक्ति का सीधा सम्बन्ध भक्त और भगवान से होता है। सूरसागर के रचियता सूरदास, रामचरितमानस के गोस्वामी तुलसीदास, कृष्ण की अनन्य उपासिका मीराबाई, हिन्दू–मुस्लिम में समन्वय स्थापित करने वाले कबीरदास, दादूदयाल और रैदास आदि कई निर्गुण संत माने गए है। जिनमें कबीर और रैदास को प्रगुण निर्गुण कवि और संत माना गया है।

कबीर भक्तिकाल के उन कवियों में से है जो निर्गुण–भक्ति–मार्ग के अनुयायी होने के साथ–साथ वैष्णव भक्त भी थे। उनकी इस निर्गुण वैष्णव भक्ति पर भारतीय अद्वैतवाद तथा मुसलमानी एकेश्वरवाद का बराबर प्रभाव दिखाई देता है। वास्तव में कबीर ने निर्गुण–वैष्णव–भक्ति के द्वारा समकालीन समाज में पनप रहे हिन्दू और मुसलमानों को आपसी वैमनस्य को समाप्त करने का प्रयास किया। उन्होंने एक ऐसी सामान्य भक्ति का प्रचार करना चाहा, जिसमें राम और रहीम, कृष्ण और करीम, महादेव और मुहम्मद की एकरूपता के माध्यम से मानव की एकता पर बल दिया गया।

संत कवि रैदास का नाम संतो में बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। 'गुरू रविदास' निम्न वर्ग में पैदा हुए थे। इन्होंने अध्यात्म के माध्यम से समाज में दलितों के प्रति हो रहे अत्याचार, तिरस्कार तथा भेदभाव को समाप्त करने का प्रयास किया। उन्होंने एक ऐसे वर्ग को जागृत करने का प्रयास किया है, जो सदियों से धर्म के क्षेत्र के आने को व्याकुल था। उनके लिए रैदास ने भक्ति के ऐसे मार्ग की तलाश की जिसमें सभी धर्म–जाति के बंधन से मुक्त हो ईश्वर का स्मरण कर सके। रैदास ने हिन्दू–मुस्लिम आदि सभी धर्मो के ईश्वर को अलग–अलग न मानते हुए, सबका एक ही ईश्वर मानते हुए, परस्पर प्रेम और सौहार्द का संदेश दिया है–

***पोस्ट डॉक्टोरल फ़ेलो हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय**

''कृष्ण करिम राम हरि राघव, जब लागि एक न पेशा।
वेद कतेब कुरान पुरानन सहज एक करि भेषा।।''[1]

कबीर और रैदास जैसे बहुत कम कवि हैं, जो अपनी उदात्त प्रतिभा के बल पर अशिक्षितों और जनसाधारण के विचारों को परिष्कृत करके उन्हें प्रगति के पथ पर अग्रसर करते है। मध्यकाल में धर्म समाज, संस्कृति और राजनीति में एक सृजनात्मक क्रान्ति का बीजारोपण हुआ और जीवन के व्यावहारिक पक्ष के नये मूल्यों की उपयोगिता सामने आई। उस समय हिन्दू–मुस्लिम तथा ब्राह्मण–शुद्र इन सभी धर्मो के बीच की खाई गहरी होती जा रही थी। इस समस्या को तद्युगीन संतो ने समझा और इससे निजात पाने के लिए उन्होंने लोगों को रूढ़ियों, अंधविश्वास, रूढ़िबद्ध धार्मिक मान्यताओं का विरोध करने की अपील की। ईश्वर सर्वव्यापक है इस बात को स्पष्ट करते हुए रैदास कहते है–

''करता, एक अनेकै, स्वामी, सब विधि सब घट साई।
कह रैदास भक्ति एक उपजी, सहजै होम सहाई।
बाहर भीतर सब स्थल एक हरि ही है के अस्तित्व की अनुभूति।
सब में हरि हैं, हरि में सब हैं, हरि अपने जिन जाना।।''[2]

कबीर और रैदास इन कवियों में वैदिक परम्परा के प्रति न तो आस्था थी और न इसके अध्ययन में रूचि ही। ये शिक्षित नहीं थे परन्तु अनुभव के आधार पर इन्होंने ईश्वर के स्मरण, भजन के माध्यम से भक्ति की गंगा प्रवाहित की जिससे सबके मन की मलिनता दूर हो गई। इस भक्ति–गंगा में स्नान करने का अधिकार सबका था।

सन्त कबीर और रैदास मध्यकालीन संत माने जाते है। इस युग में भक्तिकाव्य की मुख्य दो शाखाएं मानी गयी है– (1) सगुण भक्ति काव्यधारा (2) निर्गुण भक्ति काव्यधारा। सगुण भक्ति की दो काव्य शाखाएं है– (i) राम भक्ति काव्य शाखा (ii) कृष्ण भक्ति काव्य शाखा। इन दोनों काव्यशाखाओं में क्रमशः राम और कृष्ण के साकार रूप की उपासना का वर्णन मिलता है। निर्गुण भक्ति काव्यधारा के भी दो काव्य शाखाएं है– (i) ज्ञानाश्रयी काव्यशाखा (ii) प्रेमाश्रयी काव्यशाखा। इन दोनों शाखा में क्रमशः कबीर, नानक, दादू और मलिक मुहम्मद जायसी प्रमुख कवि माने गए है। निर्गुण भक्तिकाव्य में ईश्वर के निराकार रूप की उपासना की जाती है।

''निर्गुण शब्द अपने पारिभाषिक रूप में सत्वादि गुणों से रहित या उनसे परे समझी जाने वाली किसी ऐसी अनिवर्चनीय सत्ता का बोधक है, जिसे बहुधा परम तत्व, परमात्मा अथवा ब्रह्म जैसी संज्ञाओं द्वारा अभिहित किया जाता है।''[3]

निर्गुण विचारधारा का दूसरा प्रमुख तत्व यह है कि उस ब्रह्म तक पहुँचना दर्शन–शास्त्र के वश में भी नहीं, फिर भी उसका साक्षात्कार सम्भव है। यह मात्र अनुभूति के बल पर ही सम्भव है। आत्मसमर्पण निर्गुण ब्रह्म की उपासना और साक्षात्कार का प्रथम चरण है। गुरू का महत्व, नाम स्मरण के महात्मय पर भी जोर दिया गया है। ईश्वर बाह्य आडम्बरों, छाया–तिलक लगाने और घण्टा बजाने आदि से नहीं मिलते बल्कि उनकी प्राप्ति तो ज्ञान, कर्म और योग आदि के साथ प्रेम योग से स्वीकार किया गया है।

कबीर ने जिस ईश्वर का निरूपण किया है उसका स्वरूप निर्गुण एवं निराकार है। कबीर और रैदास दोनों की रचनाओं के विविध रंग और रूप मिलते है। इस कारण पुरूषोत्तम अग्रवाल ने कहा भी है– ''न जाने कितने अनाम कवियों ने कबीर के विपुल रचना संसार की समृद्धि में उप–रचनाओं का योगदान किया है ये अनाम कवि विभिन्न क्षेत्रों एवं विभिन्न कालों के रहें है। अपनी रचनाओं पर कबीर की छाप छोड़ जाने वाले इन कबीर–कवियों ने शायद पूरी–पूरी रचनाएँ अलग–अलग भी रची हो और शायद अनेक रचनाएं ऐसी भी हो, जिनमें कई कवियों की प्रतिभा बोल रही हो। इसीलिए इनमें विविधता भी मिलती है, और विभिन्न काल खण्डों के हस्ताक्षर भी।''[4] अतः रैदास के साथ भी ऐसा घटित हुआ हो। रैदास अपने ईश्वर से प्रार्थना करते है और कहते है कि मैं आप की भक्ति किस प्रकार करूँ? आप के बिना 'संशय का बोझ' मेरे ऊपर लदा रहता है। काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह की माया– मुझे संसार के भ्रम जाल में उलझाती रहती है। प्रभु मेरे भ्रम जाल पर विचार करो। मुझे जन्म–मरण आदि के बंधन से उबारने वाला–आप के सिवा कोई दूसरा नहीं है। उन्हीं के शब्दों में–

''अब कछु मरम विचारा हो हरि।
आदि अंत औसाण राम बिनु कोई न करै निखारा हो हरि।।''[5]

संत कबीर और रैदास दोनों ऊँच–नीच, अस्पृश्यता, मूर्तिपूजा और जाति–बन्धनों आदि की कठोरता के विरोधी थे। वे समता के गायक थे। उन्होंने निर्गुण निराकार ब्रह्म को दिग्भ्रमित और निराश जनमानस के हृदय में ज्ञान की खण्ड ज्योति जलाकर उसे प्रकाशित किया। आध्यात्मिक और सामाजिक दोनों धरातल पर अपना समान अधिकार रखा। समाज के लोगों में व्याप्त रूढ़ियों, कुरीतियों,

बाह्यडम्बरों का विरोध कर उनमें ज्ञान का प्रसार किया। इस तरह से कबीर और रैदास इन दोनों संतो ने सामाजिक, धार्मिक, एकरूपता की अलख जगाने का सफल प्रयास किया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. संत रैदास– योगेन्द्र सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ0 102
2. वही, पृ0 81
3. हिन्दी साहित्य कोश, भाग–1, पृ0 5
4. अकथ कहानी प्रेम की– पृ0 44
5. निर्गुण भक्ति सागर– पृ0 429